ISSN 2250-2467

दृष्टि

An International Research Referred Journal Related to Higher Education

Volume 5, No. 1 2014

spirit of youth

छात्र कल्याण केन्द्र
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी (भारत)

विषयानुक्रमणिका

अंक–5, भाग–1			2014
1.	मानव समाज के विषय में भारतीय...	*योगेश त्रिपाठी*	01–08
2.	प्राचीन भारतीय दूरी मापक विधा...	गीताजंली गुप्ता	09–14
3.	माघ–काव्यगत शाब्दिक दृष्टि...	मधुसूदन	15–23
4.	कवि : रामविलास शर्मा	पूरन कुमार	24–31
5.	मानवाधिकार के आइने में स्त्री...	सुजाता कुमारी	32–39
6.	जन–जीवन के कवि : नागार्जुन	भूपेन्द्र सिंह	40–47
7.	आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और लोकमंगल...	राघवेन्द्र पाण्डेय	48–55
8.	दलित साहित्य की अवधारणा एवं हिन्दी...	रामानन्द यादव	56–69
9.	जनसंचार माध्यम : सामाजिक संदर्भ	अभिषेक उपाध्याय	70–78
10.	जनगायक केदारनाथ अग्रवाल	सत्येन्द्रकुमार यादव	79–82
11.	बौध दर्शन में बोधिसत्त्व की अवधारणा	जैमिनी कुमार	83–90
12.	भारतीय कला में : लघु चित्र शैली	गरिमा गुप्ता	91–96
13.	गैंग्रीन (रोज) : मानवीय संवेदना...	अवनीश कुमार मिश्र	97–101
14.	सांस्कृतिक गरी वाराणसी में समस्याओं...	ज्योति श्रीवास्तव	102–107
15.	आदिवासी जीवन का यथार्थ...	अनीता देवी	108–115
16.	भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में उर्दू...	ज़मीला बीबी	116–122
17.	वैवाहिक सम्बन्ध एवं इनका बदलता...	मीनाक्षी सिंह कुशवाहा	123–127
18.	पूर्व मध्यकालीन सामाजिक स्तरीकरण...	राजेश कुमार केसरी	128–133
19.	हिन्दी आलोचना की परम्परा...	रंजना पाण्डेय	134–142
20.	काशी हिन्दू विश्वविद्यालय और प्राचीन...	राजीव कुमार जायसवाल	143–150
21.	स्त्री सशक्तता का जमीनी यथार्थ...	प्रेमलता	151–155
22.	धार्मिक परिप्रेक्ष्य में संगीत का स्थान	अंकिता गोस्वामी	156–161
23.	संगीत सौन्दर्य में बंन्दिशों का महत्व...	प्रिया पाण्डेय	162–168
24.	स्वतन्त्र तबला वादन में सौन्दर्य बोध...	ज्ञान सिंह पटेल	169–176
25.	भारतीय ज्योतिर्विज्ञान की वैज्ञानिक...	मधुसूदनमिश्र	177–183
26.	भरतनाट्यम् नृत्य की सौन्दर्यवृद्धि...	अलका गिरि	184–188
27.	भारतीयमूर्ति एवं नृत्यकला...	संतोष कुमार	189–195
28.	संगीत एवं योग का अन्तर्वेषयिक सम्बन्ध	रितु सिंह	196–201
29.	हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत शिक्षण...	सत्य प्रकाश	202–209

दृष्टि–2014 (अंक 5) भाग–1, 184–188

भरतनाट्यम् नृत्य की सौन्दर्यवृद्धि में आहार्य का योगदान

*अलका गिरि**

सौन्दर्य के प्रति मानव का आकर्षण स्वाभाविक है। मनुष्य अपने परिवेश को सदैव सौन्दर्यपूर्ण देखना चाहता है। यह अनुभव सिद्ध तथ्य है कि कोई भी सुन्दर वस्तु व्यक्ति के मन को प्रफुल्लित करती है। प्रफुल्लित मन अपने चारो ओर एक आनन्दमय वातावरण की सृष्टि करता है व नई स्फूर्ति का अनुभव करता है। स्फूर्ति तथा आनन्द के स्रोत के रूपमें सौन्दर्य की भूमिका को पहचान कर ही मनुष्य अपने परिवेश के साथ स्वयं को भी अर्थात् अपने शरीर को सुन्दर बनाने के प्रति सजग हुआ और वस्त्रालंकारों द्वारा अपने को आकर्षक बनाने की दिशा में प्रवृत्त हुआ। इस प्रयास में दो बातें सिद्ध हो जाती है एक तो स्वयं के आकर्षण को बढ़ाने हेतु सुसज्जित वस्त्रों एवं आभूषणों का प्रयोग, दूसरा इनको व्यवहार में लाते समय जिस चेतना का सहारा लिया जाता है वहाँ उनकी कलात्मक कल्पनाशीलता का दर्शन भी हो जाता है।

वस्त्राभूषण का प्रयोग ही संस्कृति का वह पक्ष है जहाँ मनुष्य और पशु में भेद दृष्टिगोचर होता है। यहाँ यह ध्यान रखना आवश्यक है कि जहाँ आभूषणों का प्रयोग सोन्दर्य की अभिवृद्धि हेतु ही मुख्य रूप से होता है वहीं वस्त्रों का मूल प्रयोजन शरीर को ढंकना है। विभिन्न ऋतुओं के अनुसार शरीर के अनुकूलन के लिये भिन्न–भिन्न प्रकार के वस्त्रों का प्रयोग होता है। संस्कृति के विकास के साथ–साथ मुख्यतः भारत में सामाजिक रिश्तों की मर्यादा के अनुरूप भी परिधान धारण करने पर बल दिया जाता है। वस्त्रों का दूसरा प्रयोग आकर्षण को बढ़ाना भी है अतः वस्त्राभूषण संस्कृति के विभिन्न पक्षों को निर्दिष्ट करता है जिसमें काल एवं स्थान विशेष का सूचना भी मिल जाता है भरतमुनि ने भी नाट्यशास्त्र में वस्त्राभूषणों का विभाजन काल एवं स्थान विशेष को ध्यान में रखते हुए किया है।

नाट्यशास्त्र के अनुसार शरीर के विभिन्न अंगो, उपांगों तथा विभिन्न चेष्टाओं द्वारा जिस सांकेतिक अर्थ का सृजन होता है वह आंगिक अभिनय कहलाता है। उसी प्रकार नाट्य के अन्तर्गत जो भी व्यापार वाणी द्वारा सम्पादित होता है यथा पात्रों के बीच होने वाला संवाद, वह वाचिक अभिनय के अन्तर्गत आता है। मन की संलग्नता से उद्भूत भावों (जिसमें आंगिक व वाचिक दोनों का

* (शोध छात्रा–नृत्य विभाग) संगीत एवं मंच कला संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी।

योग हाता है) को सात्विक अभिनय एवं वस्त्र तथा आभूषणों द्वारा पात्रों का अनुकरण आहार्याभिनय के अन्तर्गत शामिल किया जाता है। भरतमुनि ने चारों अभिनयों में आहार्याभिनय की विशिष्ट भूमिका को स्वीकार किया है क्योंकि यह तीनों अभिनयों यथा आंगिक, वाचिक तथा सात्विक को आधार प्रदान करने के साथ ही इनके प्रभाव को बढ़ाता है नाट्यशास्त्र में समस्त प्रयोग को आहार्य पर निर्भर बताया गया है :

"यस्मात् प्रयोगः सर्वोऽयमाहार्याभिनये स्थितः"।।

(ना० शा० / पारस० द्वि० / 21 / श्लोक 1)

आहार्य के द्वारा किसी पात्र (स्त्री अथवा पुरूष) की मनोदशा, सामाजिक स्थिति एवं आयु आदि का परिचय सहजता से हो जाता है। आहार्य एक ऐसा सबल माध्यम है जो आंगिक अथवा वाचिक अभिनयों के बिना भी बहुत सी बातों का परिचय प्रेक्षक वर्ग को करा देता है। उदाहरण के लिये जैसे बिना किसी पूर्व परिचय के अभिनेता मंच पर उपस्थित होता है तो प्रेक्षक वर्ग उसके वस्त्र व अलंकारों के माध्यम से यह जान जाते हैं कि अमुक व्यक्ति राम की भूमिका निभायेगा अथवा रावण की।

भरतमुनि ने अपने वृहद ग्रन्थ नाट्यशास्त्र में स्वतंत्र अध्याय के रूप में (21वां अध्याय) आहार्य को ही विस्तृत रूप से विवेचित किया है जिससे आहार्य का विशिष्ट महत्व स्पष्ट होता है। नाट्य के साथ–साथ नृत्य में भी आहार्य का विशेष महत्त्व है, यह नृत्य की शोभा बढ़ाने के साथ–साथ नृत्य कला की शैलियों यथा भरतनाट्यम, कथक, ओडिशी आदि की पहचान का सहज माध्यम होता है साथ ही आहार्य नृत्य के भावों को और अधिक सशक्त करके प्रस्तुति को सफल बनाता है।

मंचकला की किसी भी विधा के दो पक्ष होते हैं ,पहला शिक्षण दूसरा मंचप्रदर्शन गुरु से शिक्षा प्राप्त करते समय पूरा ध्यान विधा विशेष की तकनीक एवं भावपक्ष को हृदयंगम करने पर होता है जहां क्रमशः अभ्यास एवं मानसिक परिपक्वता विद्यार्थी के संबल होते हैं वहां शैली विशेष के अनुरूप अभ्यास की सुविधा हेतु परिधान धारण करना पर्याप्त होता है किन्तु विद्यार्जन के उपरान्त जब कलाकार के रूप में मंचप्रदर्शन का अवसर आता है वहां नृत्य के भावपक्ष एवं तकनीकी पक्ष के साथ–साथ नृत्य प्रस्तुतिकरण को आकर्षक एवं प्रभावशाली बनाने पर ध्यान देना आवश्यक है।

नृत्य कला मानव संस्कृति की उपज है यह अपने आप में भाव व अर्थपूर्ण कला है जो कि रसिक जनों को आनन्दित करता है किन्तु वस्त्र एवं आभूषण (आहार्य) नृत्य को और भी सौन्दर्यपूर्ण व भावपूर्ण बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सरल शब्दों में कहा जा सकता है कि नृत्य की दर्शनियता वृद्धि में आहार्य (वस्त्र,आभूषण) की महत्वपूर्ण भूमिका होती है जो कि दर्शक व प्रस्तुति के

बीच सामंजस्य स्थापित कर दर्शकों को कला का आनन्द उठाने में सहयोग प्रदान करता है।

मनुष्य की सभ्यता अत्यन्त प्राचीन है तथा उसके हृदय में हमेशा से नवीनता के प्रति आकर्षण रहा है जिसके फलस्वरूप अनेक परिर्वतन देखने को मिलते हैं। समाज में सौन्दर्य की अवधारणा निरन्तर परिवर्तित होती रही है, फलतः मनुष्य द्वारा स्वयं के सौन्दर्य को बढ़ाने के मानकों में भी समय–समय पर परिवर्तन होते रहे हैं। मनुष्य ने अपनी कल्पनाशक्ति द्वारा उपलब्ध तत्कालीन सामग्रियों से अपने परिधान एवं आभूषणों को अधिकाधिक आकर्षक बनाया है फलस्वरूप इनमें पर्याप्त विविधता दृष्टिगोचर होती है।

भरतनाट्यम् के सौन्दर्यवृद्धि में भी आहार्य की महत्वपूर्ण भूमिका है, प्रारम्भ में दक्षिण भारतीय स्त्रियों द्वारा धारण किये जाने वाले कांजीवरम् साड़ी और आभूषणों को ही धारण करके नृत्य किया जाता था, किन्तु इस प्रकार के सामान्य प्रचलन के वस्त्र व आभूषण को धारण करने से प्रस्तुति में अनेक कठिनाईयों का सामना करना पडता था।

देवदासियों द्वारा नृत्य प्रस्तुति के समय धारण किये जाने वाले वस्त्र एवं आभूषण

प्रस्तुति में आने वाली इन कठिनाईयों को दूर करने एवं नृत्य के सौन्दर्य में वृद्धि हेतु गुरू श्रीमती रूक्मिणीदेवी अरूण्डेल जी ने इसकी पोशाक की नई परिकल्पना कि जो वर्तमान समय में भरतनाट्यम् नृत्य की पहचान बन चुकी है।

इसके अन्तर्गत चटख रंग की कांजीवरम् साड़ी को कई भागों में काटकर स्टिच ड्रेस" तैयार किया गया जो की लगभग पांच भागों में सिला होता था जिसमें ब्लाउज, पल्लू, पैजामा, बैकी या फड़का (कमर को पीछे से ढकने वाला अर्धचन्द्राकार वस्त्र) व चुन्नटो का बना पंखा, जो पैजामे में सामने की ओर लगाया

जाता था जो कि कलाकार को नृत्य करने में सुविधा प्रदान करने के साथ ही नृत्य व ड्रेस के सौन्दर्य में वृद्धि करता है। इसके अतिरिक्त और भी कई प्रकार की शैलियों में भरत्नाट्यम् नृत्य की पोशाक तैयार कि जाती है जैसे– साड़ी व स्कर्ट शैली।

वर्तमान समय में प्रयोग किये जाने वाले स्टिच ड्रेस

भरतनाट्यम् नृत्य में वर्तमान समय में धारण किये जाने वाले आभूषणों को टेम्पल ज्वेलरी कहते हैं इसके अन्तर्गत जिन आभूषणों का समावेश किया गया है उसका विवरण इसप्रकार है–

सिर व बालों का आभूषण–तलै समान, नेत्तैचुट्टी (मांगटीका), सूरज व चांद (प्रतीक), राकुडी, सफेद व लाल

(कपडे. या कागज के बने हुए) पुष्प, कुंजळम्।

कान का आभूषण– स्टड–टॉप्स

माटल– पत्थर (स्टोन) या मोतियों से निर्मित लम्बाकार आभूषण जो स्टड में लगाकर बालों में फसाया जाता है

झुमका

नाक का आभूषण– मोती लगा बुलाक एवं नग या पत्थर (स्टोन) लगे हुऐ गोलाकार आभूषण

गले का आभूषण

काशमाला– सिक्कों से बना आभूषण।

मांगईमाला–आम की आकृति के समान आभूषण।

मुत्तु माला–विभिन्न प्रकार की मोतियों से निर्मित मोती की माला,ये तीनों मालाऐं वक्षस्थल तक लम्बी होती हैं

अडिगे– नग या पत्थर(स्टोन) का बना हुआ गले से सटा आभूषण।

हाथों का आभूषण– हस्तकटक (कंगन)

चूड़ीयां,

बाजूबन्द या वन्की।

अंगुलियों का आभूषण– अंगूठी या मोदिरम्।

कमर का आभूषण– बेल्ट के समान पहना जाने वाला वड्याणम्।

पैरों का आभूषण– घुंघरु एवं आलता।

भरतनाट्यम् नृत्य में वर्तमान समय में धारण किये जाने वाले आभूषण

इस प्रकार भरतनाट्यम् नर्तकियां नख–शिख श्रृंगार से पूर्णरूप से सुसज्जित रहती हैं और मंच पर वस्त्राभूषण से युक्त भरतनाट्यम नृत्य की प्रस्तुति और भी सौन्दर्य पूर्ण हो जाती है। अतः निःसन्देह कहा जा सकता है कि भरतनाट्यम नृत्य की सौंदर्यवृद्धि में आहार्य की भूमिका महत्वपूर्ण होती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भरतनाट्यूम शिक्षा भाग–1 – डॉ0 पुरू दाधीच
2. सौन्दर्यशास्त्र पाश्चात्य एवं भारतीय परम्परा– डॉ0 ममता चतुर्वेदी
3. नाट्यशास्त्र भाग तीन – आचार्य मधुसूदन शास्त्री
4. भारतीय कला को बिहार की देन– डॉ0विन्ध्येश्वरी प्रसाद।
5. भरतनाट्यम् भाग 1– लक्ष्मीनारायण गर्ग।